स्वपथगामी
अक्टूबर 2004 अंक - 3

मानसिक गुलामी से मुक्ति

हमारे जीवन जीने की प्रक्रिया में जितना जरूरी निरन्तर सीखना है, उतना ही जरूरी है थोपी हुई मान्यताओं और मानसिकताओं को बदलना। जब हम अपनी गुलाम मानसिकताओं को बदलकर अपनी सोच विकसित करते हैं, तो हम अपने जीवन, अन्य लोगों और प्रकृति के साथ अपने रिश्ते को भी अलग नजरिये से देख पाते हैं।

हम स्वपथगामियों ने अपने जीवन में अलग–अलग स्तर पर गुलाम मानसिकताओं, मान्यताओं और स्कूल में सिखाए गए झूठों को पहचाना हैं। व्यवस्था के नियन्त्रण में पोषित मानसिकताओं से मुक्त होकर हम अपनी स्वतन्त्र सोच को विकसित कर रहे हैं और जीवन जीने की मानवीय प्रक्रियाओं को अपनाते हुए नए–नए विकल्प बना रहे हैं।

''मैंने अपनी इस मानसिकता को बदला है कि एक आदमी केवल एक ही तरह का काम कर सकता है।''
– लीला, वायनाड़ (केरल)

''अपनी पुरानी मान्यता को बदलकर आज मैं यह मानता हूँ कि यदि मुझसे कभी भी गलती न हो, तो इसका अर्थ है कि मैं रचनात्मक कार्य करने का प्रयास नहीं नहीं करना चाहता।''
– अजीत पँवार, उत्तरकाशी

''बड़े उद्योग और मशीनों से सबका भला हो सकता है और भौतिक वस्तुओं के उपभोग व उनकी इच्छा रखने में ही सुख है, ऐसी मानसिकता को छोड़ दिया।''
– मिथुन शाह, अहमदाबाद

स्वपथगामी बनने के लिए कौनसी मानसिकता को बदला?

''मेरी बात या मेरा नजरिया ही सम्पूर्ण सत्य है; अपनी इस मानसिकता को बदलने पर मैं चीजों को विभिन्न नजरियों से देख पा रहा हूँ। मुझे अब लगता है कि किसी भी सवाल का कोई एक बना–बनाया जवाब नहीं हो सकता और कोई भी बात अन्तिम रूप से सत्य नहीं होती।'' – रोहित ठाकुर, बीकानेर

''मैंने इस मानसिकता को छोड़ दिया कि केवल 'थ्योरी' पढ़कर ही सीखा जा सकता है। मैं सीख सकता हूँ प्रकृति से, मैं सीख सकता हूँ पक्षियों, नदियों ...को देखकर।''
– सन्दीप पी. के, वायनाड़

''स्कूली व्यवस्था, वर्तमान माहौल व मान्यताओं में जिसे 'सफलता' माना जाता है या 'फिट' होना कहा जाता है, उसके खोखलेपन और संकीर्णता का अहसास होता गया और मैं स्वपथगामी बनती गई।''
– रेशमा भारती, दिल्ली

''मेरा मानना था कि पुस्तकों और मीडिया से मिली सूचनाएँ ही ज्ञान है। स्वपथगामी बनने के लिए मैंने सूचनाओं और ज्ञान के बीच अन्तर को पहचाना है। अब मुझे लगता है कि अपनी अक्ल या विवेक के बिना कोरी सूचनाएँ व्यर्थ है।''
– अनीश सिंह, दिल्ली

''शिक्षक और प्रशिक्षक के रूप में मैं अकसर दूसरों को 'सिखाने' में विश्वास करता था। इन दोनों प्रकार की भूमिकाओं से मुक्त होकर अब मैं स्वयं सीखने और साथ मिलकर सीखने में विश्वास करता हूँ।''
– रामावतार सिंह, अजमेर

walking out...

''मैं मानती थी कि जब मैं किसी परिस्थिति का सामना करती हूँ, तो उस परिस्थिति को बदलने से ही समस्या हल हो सकती है। लेकिन आज मैं मानती हूँ कि हो सकता है कि मैं उस परिस्थिति को न बदल पाऊँ, लेकिन मैं खुद को बदल सकती हूँ।''
– मीना, वायनाड़

walking on...

अपनी सोच के बिना तकनीकि ज्ञान व्यर्थ है

- विनय फुटाणे <vinayfutane@rediffmail.com>

स्वपथगामियों के लिए सीखने के मौके बनाने व अभिव्यक्ति के माध्यम विकसित करने के लिए 25 अगस्त से 2 सितम्बर तक उदयपुर में 'फिल्म निर्माण कार्यशाला' का आयोजन किया गया। शिक्षान्तर (उदयपुर), अभिव्यक्ति (नाशिक) एवं मुम्बई के साथी शम्मी नन्दा (फिल्म–मेकर) के संयुक्त प्रयास से आयोजित इस कार्यशाला में लगभग 30 स्वपथगामियों ने मिलकर छोटी–छोटी फिल्में बनाईं। इसके साथ ही 'पहले राखी बनाएँ, फिर राखी मनाएँ' उत्सव एवं 'लर्निंग एक्सचेंज' प्रक्रिया भी कार्यशाला का महत्त्वपूर्ण हिस्सा थे। जिसमें सबने अपने विभिन्न हुनरों, क्षमताओं का आदान–प्रदान किया। कार्यशाला के कुछ अनुभव पृष्ठ 2 व 3 पर दिए गए हैं।

मैं जैविक खेती से जुड़ा हूँ और मेरी कोशिश है कि अपने खेती के अनुभवों को अन्य लोगों के साथ बाँटूँ। जब मैंने फिल्म निर्माण कार्यशाला के बारे में सुना, तो मैंने विचार किया कि मेरे अनुभवों और प्रयोगों को सम्प्रेषित करने के लिए फिल्म बहुत अच्छा माध्यम हो सकती है। यह मेरे लिए एक अवसर था, जहाँ मैं अपनी रुचि के विषय पर खोज करके फिल्म बनाने की प्रक्रिया को सीख सकता था।

हमने यहाँ छोटे समूहों में फिल्में बनाने का काम किया। हमने मिलकर तय किया कि हम अपने आसपास के परिवेश में चीजों, घटनाओं को ध्यान से देखें और सीखने की जगहों को पहचानें और उनको आपस में जोड़ते हुए कहानी तैयार करें और उस पर फिल्म बनाएँ। मैंने महसूस किया कि आम तौर पर हम अपने आसपास की घटनाओं पर ध्यान नहीं देते और अपनी इन्द्रियों का ठीक से इस्तेमाल नहीं करते हैं। हमारे समूह ने 'मोजड़ी' (राजस्थानी जूता) को फिल्म का विषय चुना। इसके माध्यम से हमें मेवाड़ की संस्कृति के कई पहलुओं को समझना और कहानी बनाना था।

हमारे सामने यह चुनौती थी कि हमें केवल 5–6 शॉट्स में पूरी फिल्म तैयार करनी थी। इस पूरी प्रक्रिया में मैंने महसूस किया कि फिल्म निर्माण का तकनीकि पक्ष इतना अधिक महत्त्वपूर्ण नहीं है, जितना चीजों को बारीकी से देखना, कल्पना करना और अपने विवेक से अपनी बात को अभिव्यक्त करना है। जब तक मैं अपने विवेक और सोच को विकसित नहीं करता, तब तक कोरे तकनीकि ज्ञान का कोई अर्थ नहीं है। मैंने यहाँ पर 'मेघा ढका तारा' बंगाली फिल्म देखी, जिसमें बहुत साधारण तकनीक का इस्तेमाल किया गया था। लेकिन विषय–वस्तु, प्रस्तुति कौशल और विचारशीलता की दृष्टि से यह फिल्म बहुत प्रभावशाली और जीवन्त थी।

इसके बाद मैंने खुद में यह हौसला विकसित किया है कि मैं भी जैविक खेती के अनुभवों और प्रयोगों पर छोटी–छोटी फिल्में बनाकर अपने आसपास के लोगों के बीच संवाद की शुरूआत कर सकता हूँ। फिलहाल मैं पानी और मिट्टी के संरक्षण के लिए विभिन्न तकनीकों की खोज कर रहा हूँ और इस विषय पर फिल्म बनाने वाला हूँ। इस विषय में रुचि रखने वाले स्वपथगामियों को मैं सुझावों और सहयोग के लिए आमन्त्रित करता हूँ।

मीडिया पर मेरे प्रश्न

- सुरेन्द्र सिंह विरहे <utkarsh_atoz@redffmail.com>

अबतक फिल्मों को मैं मूक दर्शक की नजर से देखता था। लेकिन फिल्मों के बारे में अपनी जिज्ञासा के कारण मैं फिल्म निर्माण कार्यशाला में शामिल हुआ था। कार्यशाला में मैं यह समझ सका कि वैश्विक मीडिया का मेरी निजी ज़िन्दगी और अपने आसपास के परिवेश पर कैसा असर पड़ रहा है?

कार्यशाला में हमने गाँधी, बराका, ग्लास, पागलपन के कई चेहरे, गॉडस मस्ट बी क्रेज़ी और मॉडर्न टाइम्स फिल्में देखीं और उनका विश्लेषण किया। इन फिल्मों से मैं नये ढंग से सोचने और कार्य करके नये प्रकार के अनुभव लेने को तैयार हुआ।

यह कार्यशाला मेरी नज़र में सिर्फ फिल्म निर्माण के गुर सीखने का अवसर ही नहीं थी, बल्कि पूरी प्रक्रिया अपने आसपास के सामुदायिक मीडिया पहचानने व विकसित करने व गहराई से विचार करने पर केन्द्रित थी। मैं अब यह भी जानने की कोशिश कर रहा हूँ कि सरकार, मीडिया और बाजार किस प्रकार एक–दूसरे से मिलकर अमानवीय व्यवस्था को पोषित कर रहे है? मैं उससे कैसे मुक्त होकर अपनी अभिव्यक्ति के माध्यम स्वयं बना सकता हूँ?

सबसे दिलचस्प बात मेरे लिए यह थी कि हमने 5–5 के समूहों में लघु फिल्में बनाईं। इसमें न केवल फिल्म–निर्माण से सम्बन्धित तकनीकि कौशल सीखा, बल्कि इन छोटी–छोटी फिल्मों के माध्यम से हमने अपने जीवन और परिवेश से जुड़े मुद्दों पर प्रश्न उठाने का प्रयास किया। हमारे समूह ने लेमन ग्रास चाय पर फिल्म बनाई, जिससे खुद के खान–पान, स्वास्थ्य और बाजार पर निर्भरता पर गहराई से सोचा।

लर्निंग एक्सचेंज से प्रेरणा

- अनीश सिंह
<anish.manzil@rediffmail.com>

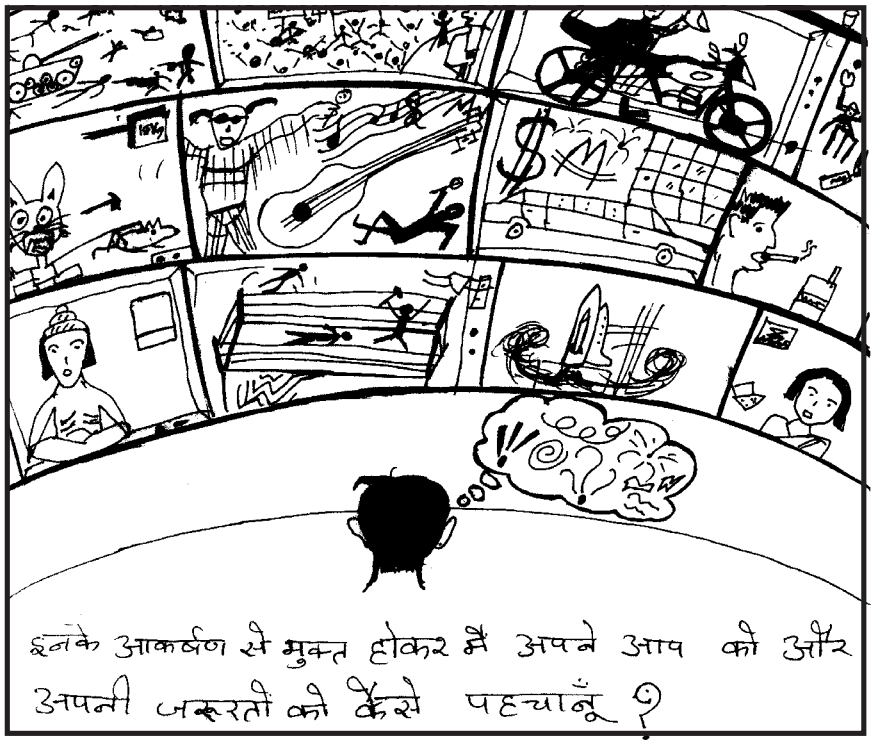

फिल्म कार्यशाला में लर्निंग– एक्सचेंज' प्रक्रिया ने मुझे सबसे ज्यादा प्रभावित किया। इस प्रक्रिया में हम अपनी कला या हुनर को एक–दूसरे के साथ बाँटते हैं, जिसमें कोई एक व्यक्ति सिखाने वाला नहीं होता, बल्कि सब आपस में सीखते हैं। इसमें सबसे पहले मैंने अम्बर चरखे पर सूती धागा बनाने की प्रक्रिया के बारे में जाना। उसके बाद प्राकृतिक रंगों (हल्दी, कुमकुम) से 'टाई एण्ड डाई' किया। इसके अलावा मैंने यहाँ प्राकृतिक तरीके से खाद तैयार करना भी सीखा। रोज दोपहर का खाना हम पत्तलों में खाते थे और खाने के बाद पत्तलों को हम एक गड्ढे में डालते थे। मैंने देखा कि कचरा सड़ने पर उसमें प्राकृतिक रूप से केंचुए पैदा हो जाते हैं। इस अनुभव से प्रेरित होकर मैंने घर में ही खाद बनाना शुरू कर दिया है। एक लकड़ी की पेटी में मैंने घर का सारा कूड़ा (सड़ने लायक कचरा) डालना शुरू किया है। सड़ने के बाद इस खाद को मैं अपने घर में गमलों में डाल सकता हूँ, जिससे मेरे घर का कचरा किसी पर बोझ नहीं बनेगा और मुझे पौधों की देखभाल का मौका भी मिलेगा।

लर्निंग एक्सचेंज ने मेरे जीवन पर गहरा असर किया। इससे मेरी हाथ के कामों में रुचि बढ़ी है। अब मैं चरखे से धागा बनाकर अपने कपड़े खुद बनाने की शुरूआत करने वाला हूँ। मेरी जिन्दगी में यह प्रश्न है कि मैं कैसे अपनी जरूरत की चीजें खुद बनाऊँ?

कंकु व मेरा जीवन

- विधि जैन <vidhi@swaraj.org>

बहुत बार माता–पिताओं के मुँह से सुना है कि हमारे सीखने की तो उम्र बीत गई है, अब तो जो सीखने का है, वह हमारे बच्चों को सिखा दो। मेरा मानना है कि कंकु (मेरी ढाई साल की बेटी) के साथ मेरी असली शिक्षा और जिज्ञासा की शुरूआत हुई है। जैसे–जैसे कंकु बड़ी हो रही है, वैसे–वैसे हम क्या खाएँ, क्या पहनें, कैसे अपने आप का मन बहलाएँ? इन सब चीजों के प्रति मेरी दृष्टि बदल रही है। मैं किस तरह बनी–बनाई भाग दौड की दुनिया से दूर हटकर प्राकृतिक जीवन से जुड़ूँ। मेरा समय इन चीजों की खोजबीन में जाता है कि आज हम जो खा रहे हैं या पी रहे हैं, वह कहाँ से आता है? उसे कौन और कैसे बनाते हैं? उसमें क्या–क्या मिलाते हैं? मेरी यह कोशिश है कि मै खाने में पेकैटबन्द चीजों का उपयोग कम से कम करूँ। ज्यादा से ज्यादा ताजी व केवल मौसमी चीजो को घर में लाएँ, ताकि 'रासायनिक खाद्य सुरक्षा' के चक्र से बच सकें। इसी कारण मेरी नई–नई चीजें बनाने की रुचि बढ गई है।

कुछ दिन से मैं और कंकु बीमारी के दौर से गुजर रहे हैं, इसलिए स्वास्थ्य व दवा–दारू पर भी मेरी खोज शुरू हुई है कि हम अपने अक्लमंद–अनुभवी परिजनों व आसपास के गुणीजनों की मदद से प्राकृतिक तरीके अपनाएँ व खुद भी औषधीय पौधों को उगायें।

साथ ही हमारा परिवार अपने मनोरंजन की अवधारणा को भी बदल रहा है। हम ऐसी प्रक्रियाओं को मिलजुलकर करना चाहते है, (जैसे – गीत, कहानी, खिलौने, खेल, नाटक, वाद्ययन्त्र, प्राकृतिक रंग आदि खुद बनाना) जो हमें केन्द्रित मीडिया व स्कूल के शिकंजे से बचाए व स्वयं को स्वावलम्बी बनाए।

कंकु की सहजता व ऊर्जा को देखकर मुझे लगता है कि मैं अपने पूरे शरीर का नहीं के बराबर इस्तेमाल करती हूँ। कंकु वास्तव में खुद को अपने पूरे शरीर से अभिव्यक्त करना जानती है। मेरे लिये यह इतना आसान नहीं है क्योकि मेरे आराम और सहूलियत की मानसिकता आडें आती रहती है, शायद इसीलिए अब मुझे भी कंकु के साथ मेरे स्वानुशासन को विकसित करना है। आज वास्तव में मेरी शिक्षा स्कूल व सर्टिफिकेट से दूर हटकर अपनी जीवनशैली के चयन पर ज्यादा निर्भर है। मैं और परिवारों को भी आमंत्रित करना चाहती हूँ कि हम मिलजुलकर परिवारों के साथ सीखने व बड़े होने के नए पथ खोजें।

एक तराशा हुआ जीवन

श्री भूपेश कावड़िया उदयपुर के स्कल्पचर कलाकार हैं, जिन्होंने अपनी जिज्ञासा और अन्तःप्रेरणा से अपनी कला को पहचाना और विकसित किया। कला को समझने के मौके के रूप में इन्होंने 'बुगन विलिया' आर्ट गैलेरी स्थापित की है। इनसे हुई बातचीत का हिस्सा प्रस्तुत है :–

▪ अपने भीतर के कलाकार को आपने कैसे पहचाना व कला को कैसे विकसित किया?

इकलौता बेटा होने के कारण पिताजी ने मुझे शहर के बड़े और महँगे स्कूल 'सेंट पॉल स्कूल' में बड़ी उम्मीद के साथ भर्ती करवाया था। चौथी–पाँचवीं कक्षा तक स्कूल में मेरी स्थिति अच्छी मानी जाती थी, पर बाद में यह स्थिति सामान्य में बदल गई। स्कूली विषयों में कभी कोई खास रुचि नहीं रही। मेरी माँ को मुझसे यह शिकायत रहती थी कि मैं सांस्कृतिक गतिविधियों में रुचि क्यों नहीं लेता?

10वीं कक्षा के बाद गर्मियों की छुट्टियों में उदयपुर में त्रिवेणी नाट्य संस्था का एक शिविर आयोजित हुआ। उस शिविर के दौरान मैंने थिएटर की सारी प्रक्रियाओं में उत्साह और जोश के साथ भाग लिया। मंच के आयोजन से लेकर अन्य व्यवस्थाओं सहित नाटक की पूरी प्रक्रिया में बहुत मेहनत की। इस नाटक में मुझे बहुत प्रोत्साहन मिला और मेरा आत्मविश्वास बढ़ा। 12वीं कक्षा के बाद मुझ पर कुछ जिम्मेदारियाँ आ गईं। रोजगार के रूप में मैंने मार्बल ट्रेड्स में काम किया। पैसों की जरूरत ने मुझे भेड़चाल में शामिल होने के लिए विवश किया। लेकिन मैंने थिएटर में अपनी रुचि को तब भी कायम रखा। मैं अपनी अभिव्यक्ति और खुद के आनन्द के लिए थिएटर करता था।

उन्हीं दिनों एक बार मैं 'टखमण 28' (मॉडर्न आर्ट के कलाकारों का समूह) के सम्पर्क में आया। यहाँ पर मैं श्री ज्ञानसिंह (बनारस) से मिला, जो पत्थर के स्कल्पचर (मूर्ति) बनाते थे। उन्हें बेडोल और अनगढ़ पत्थरों को हथौड़ी और छेनी से तराशते देखकर मैं प्रभावित हुआ। मेरी इच्छा हुई कि मैं भी करके देखूँ। झिझकते हुए मैंने उनसे पत्थर का टुकड़ा और हथौड़ी–छेनी माँगी। वह पहला दिन

था, जब मैंने अपने हाथ से एक स्कल्पचर बनाया। ज्ञानसिंह जी ने मेरी उस कलाकृति को सराहा और निरन्तर अभ्यास के लिए प्रेरित किया। उसके बाद से अब तक मैंने पत्थर का साथ नहीं छोड़ा।

एक मार्बल व्यवसायी के यहाँ नौकरी करते हुए मैंने स्कल्पचर कला को जारी रखा। तीन–चार वर्षों तक बनाई गई कलाकृतियों को मैंने एक सामूहिक प्रदर्शनी में रखा। उसके बाद कई प्रदर्शनियाँ लगाईं। स्कल्पचर बनाने के साथ–साथ मैंने बेकार व सीमित सामग्री से चित्रांकन के प्रयोग भी किए हैं।

▪ कला के प्रति आपका क्या नजरिया है?

मुझे लगता है कि सीखने की विनम्रता, जिज्ञासा, गम्भीरता और निरन्तर अभ्यास करने पर हर व्यक्ति अपनी कला को पहचानकर विकसित कर सकता है। कला का आरम्भ अन्तःप्रेरणा से होता है, जिसके लिए किसी संस्थान पर निर्भरता की कोई आवश्यकता नहीं है और न ही इसे थोपकर सिखाया जा सकता है।

मुझे कई पुरस्कार मिले, लेकिन मैं अकसर कोशिश करता हूँ कि मेरी कला पूरी तरह व्यावसायिक नहीं बने। मैं मानता हूँ कि कला का सम्बन्ध खुद के आनन्द और सन्तोष से है, जिस पर व्यावसायिक मानसिकता और पुरस्कार का लालच हावी नहीं होना चाहिए।

▪ आज आप किन मानसिकताओं को चुनौती दे रहे हैं?

करीब 3 साल पहले मैंने 12 बीघा जमीन में फलदार पेड़ों का संवर्द्धन शुरू किया है। अभी यहाँ लगभग 600–650 पेड़ हैं। मेरी कोशिश है कि आने वाले कुछ वर्षों में पूरी तरह इस प्रकृति के साथ जीवन बिताऊँ और इस जमीन को ऐसी जगह के रूप में विकसित करूँ, जहाँ प्राकृतिक उत्तरदायित्व के साथ–साथ रचनात्मक कार्य करने के अवसर भी बनाए जा सकें। अपनी आर्थिक जरूरतों की पूर्ति के लिए मैं किसी तरह के शारीरिक श्रम से संकोच नहीं करता।

आज उदयपुर के युवाओं के लिए कला को समझने और अपनी कला को पहचानने के लिए बहुत कम अवसर हैं। कला के मशीनी प्रोडक्शन, नकल और बाजारी प्रतियोगिता के चलते यह बहुत मुश्किल हो गया है कि युवा साथी नए कलाकारों के रूप में कैसे उभर कर आएँ? उदयपुर में कई जगह केवल विदेशी पर्यटकों या पैसे वालों के लिए है, लेकिन स्थानीय लोगों के लिए बहुत कम मौके हैं। इसलिए यह जगह बनाने का मेरा मकसद है कि यहाँ विभिन्न प्रकार की कलाओं में रुचि रखने वाले लोगों को आपसी संवाद और साथ मिलकर सीखने का मौका मिले। जिसमें सम्भवतः स्थानीय संसाधनों पर ही निर्भरता हो, ताकि हमें दूसरे शहरों या स्थानों पर पलायन न करना पड़े।

हाल ही में मैंने उदयपुर के कलाकारों और मॉडर्न आर्ट को प्रोत्साहित करने के लिए 'बुगन विलिया' कला प्रदर्शनी स्थापित की है। कला में रुचि रखने वाले युवाओं को बातचीत या संवाद के लिए मैं आमन्त्रित करता हूँ।

सम्पर्क :– भूपेश कावड़िया, बुगन वेलिया, 135, सहेली मार्ग, उदयपुर

पेट्रोल? नो, थैंक्स!

- सुजाता बाबर <sujata@abhivyakti.org>

नाशिक में 'अभिव्यक्ति' कार्यालय के आसपास कोई पेट्रोलपम्प नहीं था। एक साल पहले यहाँ एक पेट्रोलपम्प खुला। हम सबको बहुत आनन्द हुआ। चलो, अब दूर जाने का झंझट नहीं रहा! पिछले एक साल में इसी रास्ते पर तीन नए पेट्रोलपम्प खुल गए हैं ...और पूरा विश्वास है कि इन तीनों पर भीड़ रहेगी।

जब भी इस रास्ते से गुजरती हूँ, तो लगता है मानो ये तीनों पेट्रोलपम्प मुझसे कह रहे हों, ''आओ, जितना भी पेट्रोल लेना है, ले लो। हम आपकी सुविधा के लिए यहाँ आए हैं। ज्यादा पेट्रोल लो, ज्यादा वाहनों का इस्तेमाल करो।'' इसका कुछ तो विरोध करना चाहिए, यह विचार बार–बार में मेरे मन में आता था। मैं अपने दोस्त तुषार से प्रेरित हुई, जो अपने अन्दर की गति का आदर करके बाहर की गति का प्रतिरोध कर रहा है, अपनी साइकिल से। मैंने भी तय कर लिया कि मैं साइकिल का इस्तेमाल करूँगी।

बचपन से ही मुझे शान्त वातावरण में रहना, आसपास की चीजों को देखना, प्रकृति को देखना, उसके साथ रहना अच्छा लगता है। प्रकृति में शान्ति है, गति है, लय है, हर चीज का अपना नियम है। वह अपने आपमें सुन्दर है। प्रकृति की इस लय को हम अनदेखा क्यों करते हैं? यह प्रश्न मेरे मन में अकसर आता था। क्यों हम सबसे एक ही लय में, एक ही गति से चलने की अपेक्षा करते हैं? एक साल में तीन नए पेट्रोलपम्पों का शुरू होना! इस घटना ने मुझे अस्वस्थ किया।

आज मैं साइकिल चलाती हूँ, तो मेरे शरीर का एक हिस्सा उसमें एक गति से शामिल होता है। मेरे विचार भी उसमें शामिल होते हैं। यह अनुभव मैंने स्कूटर चलाते समय कभी नहीं किया था। मैं खुद को शान्त और स्वस्थ महसूस करने लगी हूँ।

मेरे दोस्तों से मैंने इस बारे में चर्चा छेड़ना शुरू किया। जितने नए पेट्रोलपम्प खुलेंगे, उतनी ज्यादा रास्तों पर वाहनों की भीड़ हो जाएगी। नाशिक के रास्ते चौड़े हो रहे हैं, पर पैदल चलने वालों के लिए नहीं। इस शोषण करने वाली मार्केट व्यवस्था में, ज्यादा से ज्यादा लोग पेट्रोल खरीदें और व्यवस्था के भागीदार बनें, यही पेट्रोलपम्पों का मकसद है। हम इस व्यवस्था का प्रतिकार क्यों नहीं करते? नाशिक में हम स्वस्थ, शान्त, प्रदूषण–रहित वातावरण कैसे बना सकते हैं? इस चर्चा को आगे ले जाने के लिए हम नाशिक में ''पेट्रोल–फ्री सप्ताह'' मनाने की सोच रहे हैं। इस विचार से, चर्चा से बहुत ऊर्जा प्राप्त हो रही है, विश्वास बढ़ रहा है।

आज जब भी साइकिल से अभिव्यक्ति आती हूँ, तो बीच में इन तीनों पेट्रोलपम्पों को विश्वास के साथ कहती हूँ 'नो, थैंक्स!'

प्रतिस्पर्द्धा से ही हम सफलता प्राप्त कर सकते हैं!(?)

-रामावतार सिंह<ramawtarsingh@yahoo.co.in>

''तुम पढ़ाई में तो ठीक हो, लेकिन तुम अन्य प्रतियोगिताओं में भाग क्यों नहीं लेते?'' मेरे शिक्षकों और बड़े भाई को मुझसे अकसर यह शिकायत रहती थी। जब भी मुझे प्रतियोगिता में शामिल होने के लिए कहा जाता, मैं यह सोचकर ठिठक जाता कि अपने ही मित्रों के साथ 'हार–जीत' का खेल कैसे खेलूँ? जिसमें हमें ऊँच–नीच, आगे–पीछे, कमजोर–होशियार की श्रेणियों में बाँटा जाता है। मेरे मन में यह भी सवाल था कि हमारी योग्यताओं, क्षमताओं का मूल्याँकन कोई और क्यों करे?

जब मुझे एक गैर–सरकारी संस्था में रात्रिशालाओं के साथ काम करने का अवसर मिला, तो मैंने भी कई प्रतियोगिताओं का आयोजन किया। मैं उसी मानसिकता का शिकार था कि इससे ही हम सफलता हासिल कर सकते हैं। तब तक मैं मानता था कि प्रतियोगिता में जीतने वाले को तो फायदा ही होता है। लेकिन बाद में मैंने महसूस किया कि जीतने वाले बच्चे अकसर शिक्षकों या निर्णायकों को खुश करने में अपनी ऊर्जा खर्च कर देते हैं। न तो उनमें आत्मविश्वास होता है और न ही वे नए प्रयोग करने का हौसला रख पाते हैं।

करीब तीन साल पहले मुझे अपने क्षेत्र में ''भाईचारा (सद्भावना) क्रिकेट प्रतियोगिता'' के आयोजन में भी हिस्सा लेना पड़ा। इस प्रतियोगिता का मकसद था कि ग्रामीण युवाओं को क्रिकेट में अपनी प्रतिभा (?) दिखाने का अवसर मिले व इसके माध्यम से समाज में सद्भावना और शान्ति स्थापित की जाए। ऐसी दो प्रतियोगिताओं के आयोजन के बाद मैंने इनका विश्लेषण करना शुरू किया। मुझे यह प्रश्न कचोटने लगा कि जिस प्रक्रिया में कुछ ही लोग जीतते हैं (सच तो यह है कि सभी लोग हारते हैं), उसमें हर व्यक्ति अपनी प्रतिभा को कैसे दिखा सकता है? ऐसी प्रक्रिया से जब मेरे मन में हिंसक भावनाएँ पैदा होती है, तो इससे समाज में 'सद्भावना' कैसे कायम की जा सकती है? अपने सही विकास और संवेदनशीलता के लिए कैसी प्रक्रियाओं की जरूरत है?

व्यवस्था को पोषित करने वाले लोग यह तर्क देते हैं कि प्रतियोगिता करने से व्यक्ति में जिज्ञासा व रुचि पैदा होती है। पर मैंने महसूस किया है कि प्रतियोगिता से पैदा की गई जिज्ञासा व रुचि मात्र दूसरों को खुश करने व अपने अहंकार को बढ़ाने के लिए होती है। मेरे कई मित्रों में लालच, हिंसक भावनाएँ और अन्धानुकरण की मानसिकता प्रतियोगिताओं के ही नतीजे हैं। जबसे मैंने इस स्कूली झूठ को पहचाना है, मैं अपनी वास्तविक रुचियों, योग्यताओं व क्षमताओं पर ध्यान देने लगा हूँ और 'सफलता' को भिन्न दृष्टिकोण से देख पा रहा हूँ। अपनी पूरी जीवन–प्रक्रिया से प्रतियोगी–भावना को निकालने का प्रयास कर रहा हूँ, ताकि अपने जीवन में नए प्रयोगों के साथ–साथ आपसी रिश्तों की अहमियत को समझ सकूँ।

प्रस्तुत कविता श्री श्यामबहादुर नम्र की पुस्तक ''राष्ट्र नहीं होती भुक्खड़ जनता'' से ली गई है। इस कविता से प्रेरित होकर मैंने 'लोकतन्त्र' की सही अवधारणा को समझने की शुरूआत की। मैं मानता था कि हमें अपनी सारी जरूरतों की पूर्ति की जिम्मेदारी व्यवस्था को सौंप देनी चाहिए और अपने सीखने व काम करने की सम्भावनाएँ भी इसी के भीतर खोजनी चाहिए। इस कविता को समझने के बाद मैंने सीखने के अवसर खुद तलाशने पर ध्यान दिया। मुझे खुद की क्षमताओं पर सोचने का मौका मिला। आज मैं वर्तमान हिंसक व्यवस्था पर प्रश्न उठाते हुए अपने परिवेश में आपसी रिश्ते मजबूत करने का प्रयास कर रहा हूँ।

– रामावतार सिंह

स्कूल छोड़कर संगीत को चुना

- सन्तोष गन्धर्व

मेरा परिवार पारम्परिक रूप से संगीत से जुड़ा रहा है। जब मैं 9 साल का था, तभी मेरी रुचि संगीत में होने लगी। मेरे चाचा अच्छे ढोलक व तबला–वादक रहे हैं। उन्हीं के साथ रहकर मैंने स्टील और लोहे के डिब्बों से वाद्ययन्त्र बजाने की शुरूआत की। मेरी रुचि धीरे–धीरे वाद्ययन्त्र बजाने में बढ़ती गई।

स्कूल जाने में कोई रुचि तो वैसे ही नहीं थी, संगीत से जुड़ने पर स्कूली–पढ़ाई से लगाव बिल्कुल कम होने लगा। आधी छुट्टी के बाद ही स्कूल से भाग जाता और संगीत के विभिन्न कार्यक्रमों में शामिल हो जाता। कभी–कभार मुझे स्कूल में ढोलक बजाने के लिए कहा जाता, लेकिन मुझे उस माहौल में ढोलक बजाने में झिझक होती थी और मुझे वहाँ अच्छा भी नहीं लगता था। अन्ततः नौबत यहाँ तक आ गई कि स्कूल में मेरी उपस्थिति कम होती गई और 9वीं कक्षा की परीक्षा में फेल हो गया। उसके बाद तो स्कूल छोड़ने का अच्छा बहाना मिल गया।

अब मैं संगीत में पूरा समय देने लगा। अलग–अलग संगीत समूहों से जुड़ा। अभी मैं 'निशा कला केन्द्र' से जुड़ा हूँ। यह एक राजस्थानी लोक–संगीत समूह है। मेरी रुचि पारम्परिक लोकसंगीत में अधिक रही है, इसलिए मैं इस समूह के अतिरिक्त 'पश्चिमी क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र' (बागोर की हवेली) के विभिन्न कार्यक्रमों में भी भाग लेता हूँ। मैं ढोलक व तबला बजाता हूँ। ढोलक में विशेषकर दादरा, त्रिताल, कैरवा, रूपक आदि तालें बजाता हूँ और अपने घर में नित–नई ताल बजाने का अभ्यास करता हूँ। मैं अन्य वाद्ययन्त्र बजाना भी सीख रहा हूँ।

मैं मानता हूँ कि आत्मविश्वास और निरन्तर अभ्यास से ही मैं यह सब सीख पा रहा हूँ। स्कूल की पढ़ाई के साथ–साथ ये सीखना सम्भव नहीं था। इसीलिए मैंने स्कूल और संगीत में से सिर्फ संगीत को चुना। अपने इस हुनर से मुझे वे तमाम चीजें मिल सकती है, जो मेरी जरूरते हैं। मेरा सपना है कि मैं अपना एक 'लोक–संगीत समूह' बनाऊँ, जिसमें अपने परिवार को भी शामिल करूँ।

सम्पर्क :– 89, विद्याभवन के पास, देवाली, उदयपुर

रस्सी काटो और नाव आगे बढ़ाओ

रस्सी काटो और नाव आगे बढ़ाओ
कुछ लोग व्यवस्था की रस्सी से बँधी नाव खे रहे हैं,
सम्पूर्ण क्रान्ति का जायजा ले रहे हैं,
लाख खेते हैं, नाव हिलती नहीं
तब एक-दूसरे को गालियाँ दे रहे हैं।

जब मैंने कहा, 'रस्सी काटो नाव आगे बढ़ाओ',
तब वे बोले, 'काम के समय ऐसे सवाल मत उठाओ
क्या तुम्हारे दिमाग में भूसा भरा है?
अरे तुम इतना भी नहीं जानते,
कि रस्सी कटने से नाव बह जाने का खतरा है?

तुम जैसे सिरफिरे ही काम के समय
ऐसे सवाल उठाते हैं,
सम्पूर्ण क्रान्ति के मार्ग में बाधा पहुँचाते हैं,
इसलिए चुपचाप नाव खेनी हो तो आओ,
तुम भी हमारे साथ पतवार चलाओ,

रही रस्सी की बात, तो वह कभी न कभी
कमजोर होकर टूटेगी,
हमारी नाव अपने आप किनारे से छूटेगी,
नहीं तो, हम व्यवस्था से एक इतनी लम्बी रस्सी
माँग लाएँगे कि रस्सी बँधी होने के बावजूद मंज़िल
तक पहुँच जाएँगे,
आखिर तुम्हारी समझ में इतनी भी बात क्यों नहीं
आती है कि नाव बहस से नहीं
पतवार से चलाई जाती है?''

सचमुच मैं उनकी बात समझ नहीं पाता
और अकेले तैरने लगता हूँ
तो वे हँसते हैं,
और कहते हैं, कि
पागल लोग ही लहरों में ऐसे फँसते हैं,

उनमें से कुछ बहुत खुश हैं कि अब कोई सवाल नहीं
उठाएगा,
और कुछ मेरे डूब जाने की आशंका से दु:खी भी,
कि मेरे बाद मेरे बाल-बच्चों को कौन खिलाएगा?

मैं अकेले तैर रहा हूँ,
हर लहर मुझे तैरना सिखा रही है,
थपेड़े दे रही है,
नये साथियों तक पहुँचने का रास्ता दिखा रही है।
और मैं मुड़कर देखता हूँ कि वे लोग
अभी भी व्यवस्था की रस्सी से बँधी नाव खे रहे हैं,
सम्पूर्ण क्रान्ति का जायजा ले रहे हैं,
लाख खेते हैं, नाव हिलती नहीं,
तब एक-दूसरे को गालियाँ दे रहे हैं!

अनुभव-प्रदर्शन का एक साधन : पोर्टफोलियो

– शिल्पा जैन
<shilpa@swaraj.org>

आप अपनी योग्यता, कौशल और अनुभवों को कैसे प्रस्तुत कर सकते हैं? अपनी ताकतों और क्षमताओं को अपने होने वाले सहकर्मियों, सहयोगियों के समक्ष कैसे प्रस्तुत करें? पोर्टफोलियो एक ऐसा साधन है, जो इस सन्दर्भ में स्वपथगामियों के लिए बहुत उपयोगी है। डिग्री, सर्टिफिकेट, ग्रेड, रेंक आदि से बिल्कुल हटकर पोर्टफोलियो हमारे वास्तविक पहलुओं को पेश करता है। इसके माध्यम से यह दिखा सकते हैं कि हम हमारे जीवन मे किन चीजों को ज्यादा अहमियत देना पसन्द करते है? हम क्या जानते हैं और क्या कर सकते हैं? अकसर पोर्टफोलियो रोजगार या काम के अवसर जुटाने में मदद करता है।

सामान्यतः पोर्टफोलियो हस्तनिर्मित पुस्तिका के रूप में होता है, जिसमें शामिल कर सकते हैं – अपनी रुचियाँ, प्रतिभाएँ, विचार, निजी कहानियाँ, नए प्रयोग, सपने और अलग–अलग कार्यों, यात्राओं आदि के संस्मरण। उदाहरण के लिए मैंने अपने पोर्टफोलियो में शामिल किया है :–

– 'आइए, उदयपुर से सीखें' प्रक्रिया में अपनी टीम के साथ के फोटोग्राफ (सामुदायिक मीडिया, देशी खेती, स्थानीय उत्सवों में साथ मिलकर किए गए कामों के फोटो)

– स्वराज फाउण्डेशन व शिक्षान्तर की वेबसाइट के वेबलिंक, जो मैं नियमित रूप से अपडेट करती हूँ।

– मेरे लेखों की प्रतियाँ (जो प्रकाशित हो चुके हैं)

– मेरे द्वारा खींचे गए 'ब्लैक एण्ड व्हाइट' फोटो के नमूने

– मेरे नृत्य (भरतनाट्यम् और डाँडिया रास लोकनृत्य) के विडियो कैसेट्स

– 'इमेजिन शिकागो' के निदेशक ब्लिस ब्राओने से रिकॅमण्डेशन, जिनके साथ मैंने सम्मेलनों और प्रकाशन के साथ तीन माह तक काम किया।

–'यस' के निदेशक ओशन रॉबिन्स से रिकॅमण्डेशन, जिनके साथ मैं 'यूथ जेम प्रोग्राम' से नियमित रूप से जुड़ी हूँ।

पोर्टफोलियो में कई प्रकार के फॉरमेट इस्तेमाल किए जा सकते हैं – कार्टून, ड्रॉइंग, कविताएँ, फोटोग्राफ, लघु कहानियाँ, पुस्तक व फिल्म समीक्षाएँ। अपने पोर्टफोलियो की शुरूआत के लिए निम्न प्रश्नों की मदद ली जा सकती है :–

- आपके जीवन के महत्त्वपूर्ण अनुभव क्या हैं?
- आपकी विशेष रुचियाँ, गुण और प्रतिभाएँ क्या हैं?
- सृजन और अभिव्यक्ति की कौनसी विधाओं में आप सहजता महसूस करते हैं (चित्र, कविताएँ, कहानियाँ)?
- आपने किसके साथ अच्छा काम किया है, जो आपके बारे में संस्तुति (recommendation) लिख सकते हैं?
- क्या नया सीखना चाहते हैं?
- अपने जीवन में क्या–क्या प्रश्न हैं?

पोर्टफोलियो में मदद के लिए आप निम्न वेबसाइट्स देख सकते हैं और मुझसे निःसंकोच सम्पर्क कर सकते हैं।

http://www.gomilpitas.com/olderkids/Portfolios.htm
http://oror.essortment.com/creatingjobspo_rxxa.htm
http://www.eduscapes.com/tap/topic82.htm

निवेदिता निलयम्

- अमित गायत्री
<pahal_g@rediffmail.com>

वर्धा शहर से 4–5 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है निवेदिता निलयम्, जो युवाओं के लिए स्वयं सीखने–करने का खुला स्थान है। जब वर्ष 1992 में पहली बार मैं वहाँ पहुँचा, तो देखा कि वह कई मायनों में अनूठा है। वहाँ कोई शिक्षक, प्रशिक्षक या व्यवस्थापक नहीं है; यहाँ तक कि स्थायी रहने वाला भी कोई नहीं है। यह केन्द्र तीन प्रकार के युवाओं के लिए बना है – जो, आध्यात्मिक साधना (सामाजिक सरोकारों के साथ) करना चाहते हैं, रचनात्मक कार्य करना चाहते हैं और जो जन–प्रतिरोध द्वारा व्यवस्था परिवर्तन में अपना योगदान देना चाहते हैं। एक वक्त में 8–10 युवा साथ रहते हैं। वहाँ अपने हिसाब से दिनचर्या, कार्यों की प्राथमिकता और उनके बँटवारे के विषय में निर्णय करने का खुलापन है।

हम लोग वहाँ 3 घण्टे श्रमकार्य करते थे, जिसमें खेती तथा गोशाला की देखभाल मुख्य था। सामूहिक प्रार्थना, अध्ययन, सूत–कताई, खाना पकाने आदि के लिए भी वहाँ 3 घण्टे खर्च होते थे। शेष समय मैं अपनी रुचि के अनुसार पुस्तकें पढ़ने और लोगों से मिलने में व्यतीत करता था। सूत कातना मैंने वहीं सीखा। मुझे वहाँ चरखे के आर्थिक और पर्यावरणीय महत्त्व के साथ–साथ आध्यात्मिक मूल्य का ज्ञान भी हुआ। मुझे समझ आया कि खेती का उद्देश्य भी पेट भरने के लिए अनाज उपजाना मात्र नहीं है, बल्कि प्रकृति के अभिन्न अंग के रूप में उसे पुष्ट करते हुए स्वयं पोषण प्राप्त करने की एक प्रक्रिया खेती है। निलयम् में मुझे अपने जैसे ही मित्र भी मिले। हम सभी की पृष्ठभूमि अलग–अलग थी। किसी की मातृभाषा मराठी थी, तो किसी की उड़िया; कोई किसान का बेटा था, तो कोई शहर में पला बढ़ा। इसी वजह से हमारे आपसी संवाद से भी हम सीखते–समझते थे।

वर्धा शहर के पास ही गाँधीजी का सेवाग्राम आश्रम और आचार्य विनोबा द्वारा स्थापित ब्रह्मविद्या मंदिर तो है ही, साथ ही अनेक व्यक्ति तथा संस्थाएँ हैं, जहाँ विविध प्रकार के जीवन उपयोगी कार्य हो रहे हैं। स्वपथगामी युवा यहाँ पर जाकर नई चीजें सीख सकते हैं और अपने प्रयोग और अनुभव भी अन्य युवाओं के साथ बाँट सकते हैं। सम्पर्क :– निवासी युवा, निवेदिता निलयम्, साटोड़ा, पो. नालवाड़ी, वर्धा – 442 001 (महाराष्ट्र)

रेवा के युवा

'रेवा के युवा' नर्मदा बचाओ आन्दोलन से संलग्न नर्मदा घाटी के युवाओं का समूह है, जिसकी शुरूआत सन् 1999 में संवाद, संघर्ष व निर्माण इन तीन उद्देश्यों को लेकर ग्रामीण युवाओं द्वारा की गई थी। वर्तमान में यह समूह निम्नलिखित कार्य कर रहा है।

संगठन द्वारा युवा साथियों के बीच आपसी संवाद के लिए त्रैमासिक पत्रिका 'सच्ची जाणो रे' का सम्पादन किया जाता है। इस पत्रिका का उद्देश्य है कि युवा साथी अपने विचारों, अनुभवों के माध्यम से 'झूठ' के बुनियाद पर खड़ी व्यवस्था को चुनौती देकर सच्चाई को उजागर कर सकें। नर्मदा बचाओ आन्दोलन के कार्यक्रमों में संगठन की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। समूह के अधिकांश युवा नर्मदा नदी पर बाँध निर्माण परियोजनाओं से प्रभावित, शोषित एवं विस्थापितों में से हैं, जो विकास के नाम पर रची जा रही अमानवीय साजिश से निरन्तर जूझ रहे हैं। इसके अतिरिक्त संगठन ने बच्चों व युवाओं के साथ कुछ रचनात्मक कार्यों की शुरूआत की है। बस्ती के लोगों के साथ मिलकर सामुदायिक कार्य, जैसे – सामुदायिक स्रोतों की सफाई व देखरेख, स्थानीय उत्सवों का आयोजन भी करते हैं। संगठन के साथ मिलकर सीखने के इच्छुक साथी सम्पर्क करें :–

उमेश पाटीदार, रेवा के युवा, 62 महात्मा गाँधी मार्ग, बड़वानी, म.प्र.फोनः 07290–222464
<revakeyuva@yahoo.com>

स्वपथगामी फिल्मोत्सव

स्वपथगामी नेटवर्क के तहत् मार्च, 2005 में उदयपुर, नाशिक और दिल्ली में फिल्म–उत्सवों का आयोजन किया जाएगा। इन उत्सवों में मुख्यतः ऐसी फिल्मों का प्रदर्शन किया जाएगा, जो स्वपथगामियों के लिए प्रेरणादायक होंगी और स्वपथगामी होने के अर्थ को व्यापकता में समझने में मदद करेंगी। इन उत्सवों में हम अपने अनुभवों, जीवन की कहानियों, प्रेरक प्रसंगों और अपने हुनर को भी आपस में बाँटेंगे।

यदि आपने कोई ऐसी फिल्म बनाई है, जो स्वपथगामियों के लिए महत्त्वपूण हो सकती है या आप किसी ऐसी फिल्म के बारे में जानते हैं, तो फिल्म–उत्सव के लिये उपयुक्त है वह हमारे सबके साथ बाँट सकते हैं। आपके पास यदि ऐसे विचार हैं, जिन पर आप फिल्म बनाना चाहते हैं, तो आप सम्पर्क कर सकते हैं और हम साथ मिलकर फिल्म बना सकते हैं। आप भी अपनी जगह पर ऐसे फिल्म–उत्सव का आयोजन करना चाहें, तो सम्पर्क करें :–

मनीष जैन, शिक्षान्तर आन्दोलन , 21 फतेहपुरा, उदयपुर (राज.),
फोन : 0294–2451303 <manish@swaraj.org>

जैविक खेती अन्तर्राष्ट्रीय नेटवर्क

दुनिया के करीब चालीस देशों में जैविक खेती को प्रोत्साहित करने वाले लोगों ने मिलकर "WWOOF" (विलिंग वर्कर्स ऑफ ऑर्गेनिक फारमिंग) नामक अन्तर्राष्ट्रीय नेटवर्क की शुरूआत की है। इस नेटवर्क से जुड़े समूह भारत में भी 17 जगहों पर उपलब्ध हैं, जहाँ जाकर हम जैविक खेती करना सीख सकते हैं। यहाँ रहकर जैविक खेती सीखने और अपनाने वाले लोगों के लिए आवास एवं भोजन की व्यवस्था निःशुल्क उपलब्ध है। जैविक खेती की प्रक्रिया को बढ़ाने और रसायनमुक्त खाद्यों को अपनाने के लिए शुरू किए गए इस प्रयास में आपका श्रम–सहयोग अपेक्षित होगा। इच्छुक साथी नेटवर्क की वेबसाइट <www.wwoof.org> देख सकते हैं और भारत में उपलब्ध जगहों की जानकारी लेकर सम्पर्क कर सकते हैं।

आज हमारे सामने यह बहुत बड़ी चुनौती है कि हम इस बनी–बनाई दुनिया में अपनी पहचान और अपने तरीके से जीवन जीने की आजादी को कैसे कायम रखें? अमानवीय व्यवस्था के चक्रव्यूह से निकलकर अलग–अलग विकल्प कैसे बनाएँ? आज यह जरूरी हो गया है कि हम अपनी क्षमताओं को पहचानकर सृजनात्मक जीवन जीने की शुरूआत करें, जिसमें हम आपसी विश्वास एवं अन्तर्निर्भरता की नींव पर आधारित स्वराज हासिल कर सकें। इसके लिए हर व्यक्ति को अपने सीखने की प्रक्रिया को अपने हाथ में लेना पड़ेगा।

यह पत्रिका शोषणमुक्त जीवन जीने और अपने रास्ते खुद बनाने वाले स्वपथगामियों द्वारा शुरू किया गया एक प्रयास है। अलग–अलग समुदायों, समूहों और व्यक्तियों के साथ संवाद स्थापित करने की यह एक कोशिश है, जिसके माध्यम से हम न केवल अपने अनुभवों का आदान–प्रदान करेंगे, बल्कि ऐसे लोगों, संस्थानों और स्थानों से भी रू–ब–रू होंगे, जो हमारे सीखने के सन्दर्भ बन सकते हैं।

आमन्त्रण

पत्रिका में जिन नए अवसरों का उल्लेख किया गया है, उनके बारे में विस्तृत जानकारी के लिए आप उनसे सीधा सम्पर्क कर सकते हैं और उनके साथ मिलकर सीखने के बारे में बातचीत कर सकते हैं।

हम उन सभी लोगों को आमन्त्रित करते हैं, जो अपने जीवन में नए–नए प्रयोग कर रहे हैं और साथ मिलकर सीखने के मौके बना रहे हैं। **'बनी-बनाई दुनिया'**, **'स्कूल का झूठ'** और **'कुछ अवसर'** कॉलम के लिए विशेष आग्रह है कि आप भी अपने जीवन में इन चीजों को पहचानें और अपने अनुभव हमारे साथ बाँटें। साथ ही हम उन लोगों को भी आमन्त्रित करते हैं, जो इस पत्रिका के सम्पादन में सहयोग करना चाहते हैं। अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें :– रामावतार सिंह <ramawtarsingh@yahoo.co.in>
अमित <indore_amit@rediffmail.com>
C/O शिक्षान्तर, 21 फतेहपुरा, उदयपुर – 04 (राजस्थान)
फोन – 0294–2451303